कौन भाषा, कौन बोली...?

● रमाकान्त अग्निहोत्री

"अध्यापक स्वयं को शुद्ध व मानकीकृत भाषा का रखवाला मान लेते हैं। . . . प्रश्न समझ व दृष्टिकोण का है। पहली बात – बच्चा जिस भाषा को लेकर स्कूल आता है वह पूर्णरूप से व्याकरण युक्त है। दूसरी बात – उसकी भाषा उसकी शिक्षा का माध्यम नहीं बन पाई यह एक राजनैतिक, सत्तागत प्रश्न है।"

हर सामान्य व्यक्ति अपनी भाषा खूब अच्छी तरह से बोलता व समझता है। इसलिए यह स्वाभाविक है कि हर व्यक्ति यह समझे कि वह भाषा के बारे में काफी कुछ जानता है। असल में सच तो यही है कि हर व्यक्ति अपनी भाषा के बारे में बहुत कुछ जानता है। लेकिन इस भाषागत ज्ञान के बारे में आम आदमी अक्सर सचेत नहीं होता। वास्तव में उस ज्ञान के बारे में उसके लिए कुछ भी विशेष कहना संभव नहीं हो पाता। यदि यह कहा जाए कि आपकी अपनी भाषा का पूर्ण व्याकरण आपके पास है – आपके दिमाग में – तो शायद कुछ अटपटा-सा लगे। लेकिन यह बिल्कुल सच है। दूसरी तरफ भाषा के बारे में जो बातें लोग अक्सर कहते हैं वे एकदम निराधार अवधारणाओं से जुड़ी रहती हैं। इन निराधार अवधार-

णाओं के कारण काफी सामाजिक, मानसिक व शैक्षिक नुकसान होता है। यदि हम सब भाषा की प्रवृत्ति को समझने का प्रयास करें तो शायद इस नुकसान से बचने का कोई साधन निकले।

व्याकरण की समझ कितनी

अपनी भाषा के बारे में आपका ज्ञान पूर्ण एवं त्रुटिरहित है। अपनी भाषा बोलने व समझने में आप कभी गलती नहीं करते। यदि करें तो तुरन्त उसमें सुधार कर लेते हैं। इसी तरह यदि कोई दूसरा आपकी भाषा बोलने में गलती करता है तो आप उसे तुरन्त पकड़ लेते हैं।

आप नित नए-नए वाक्य बोल व समझ सकते हैं। यही नहीं आपको यह भी ज्ञात है कि किस सामाजिक संदर्भ में कैसी भाषा उचित रहेगी। लेकिन इस ज्ञान के बारे में मुक्त रूप से चर्चा करना केवल भाषाविदों तक ही सीमित रह गया। और भाषाविद् जिस भाषा में बात करते हैं वह आम आदमी की समझ में आती नहीं।

उदाहरण के लिए, यह तो हर हिन्दी भाषी जानता है कि –

गीता खाना खाता है।

ठीक वाक्य नहीं है। कुछ सोचकर शायद वह यह भी बता दे कि 'गीता' स्त्रीलिंग है इसलिए क्रिया पुल्लिंग नहीं हो सकती। (गो कि भारत में ही ऐसी अनेक भाषाएं हैं जिनमें कर्ता के पुल्लिंग या स्त्रीलिंग होने से क्रिया पर कोई असर नहीं पड़ता – अंग्रेज़ी भी ऐसी ही भाषा है)। लेकिन निम्न दो वाक्यों में यह नियम लागू नहीं होता।

मोहन ने खाना खाया।

गीता ने खाना खाया।

'मोहन' पुल्लिंग है व 'गीता' स्त्रीलिंग फिर भी दोनों ने 'खाया'। यह कहना कि –

गीता ने खाना खाई।

गलत है। इसी तरह यदि आप दुविधा में पड़े हिन्दी भाषी का ध्यान निम्न दो वाक्यों –

मोहन ने रोटी खाई।

गीता ने रोटी खाई।

की ओर ले जाएं, तो शायद कुछ कठिनाई से वह यह बता पाए कि यदि कर्ता के सामने 'ने' आ जाए तो क्रिया कर्म से मेल खाती है। सो कर्ता कोई भी हो – पुल्लिंग या स्त्रीलिंग – पर 'ने' आने पर

.... *खाना खाया।* (खाना पुल्लिंग है)

.... *रोटी खाई।* (रोटी स्त्रीलिंग है आदि)

लेकिन निम्न दो वाक्यों के बारे में हिन्दी भाषी क्या कहेगा!

मोहन ने गीता को <u>मारा</u>।

गीता ने मोहन को <u>मारा</u>।

ऐसी ही समस्याओं को लेकर भाषा वैज्ञानिक भाषा से जूझते रहते हैं। अब देखिए ना:

गीता मोहन को मारती है।

तो सही है लेकिन

गीता ने मोहन को मारी।

ठीक नहीं है।

वास्तव में जैसे ही एक हिन्दी भाषी ऐसा कोई वाक्य सुनता है उसे मालूम होता है कि कोई अहिन्दी भाषी हिन्दी बोलने का प्रयास कर रहा है। साफ है कि हर व्यक्ति अपनी भाषा का व्याकरण पूरी तरह से जानता है। लेकिन उस व्याकरण का अध्ययन करना व उसके बारे में बातचीत कर सकना बिल्कुल अलग बात है; कठिन बात है। इसलिए हमारे यहां कहते हैं – मोक्षार्थे व्याकरणमधितव्यम्।

खैर हमें तो उस ज्ञान के बारे में बातचीत करनी थी जिसका आधार अवैज्ञानिक व बेबुनियाद अवधारणाएं हैं। हर सामान्य व्यक्ति इस तरह के ज्ञान पर आधारित अनेक विश्वास या मान्यताएं पाल लेता है, निर्णय ले लेता है, लोगों को अलग श्रेणियों में बांट लेता है और कुछ से घृणा व कुछ से प्यार करने लगता है।

इन निराधार मान्यताओं को समझंना आवश्यक है। बिना समझे इनसे छुटकारा पाना संभव नहीं।

कौन भाषा कौन बोली

एक मुख्य मसला है भाषा व बोली का। किसी भी सामान्य व्यक्ति से पूछकर देखिए, वह अत्यधिक विश्वास से आपको भाषा व बोली में अन्तर बताने लगेगा। कहेगा, "भाषा का व्याकरण होता है, बोली का नहीं। भाषा की लिपि होती है, बोली की नहीं। भाषा का क्षेत्र विस्तृत होता है जबकि बोली का स्थानीय। भाषा मानकीकृत व परिमार्जित होती है, बोली नहीं। जिसका प्रयोग साहित्य, पत्राचार, दफ्तरों, अदालतों आदि में हो वह भाषा और जो बोलचाल के लिए इस्तेमाल हो वह बोली। भाषा में शुद्ध -अशुद्ध का प्रश्न उठता है, बोली में सब चलता है आदि, आदि।"

वास्तव में इस तरह के सभी तर्क गलत हैं, समाज के लिए अत्यधिक हानिकारक हैं। भाषाई दृष्टि से भाषा व बोली में कोई अन्तर नहीं। दोनों का व्याकरण होता है। दोनों नियमबद्ध हैं। किसको भाषा कहा जाएगा और किसको बोली यह एक सामाजिक प्रश्न है; राजनैतिक प्रश्न है। सत्ताधारी व पैसे वाले लोग अक्सर जो बोली बोलते हैं, वह भाषा कहलाने लगती है। उसी के व्याकरण व शब्दकोष लिखे जाते हैं। उसी में साहित्य लिखा जाता है। स्कूलों में शिक्षा का माध्यम बनकर वही बोली मानकीकृत भाषा बन बैठती

है। उसी से मिलते-जुलते, बात-चीत करने के अन्य तरीके उस 'भाषा की बोलियां' कहलाने लगते हैं। भाषा व समाज के इस रिश्ते को समझना आवश्यक है।

शायद यह ठीक ही कहा गया है कि भाषा केवल एक सशस्त्र बोली है। मुख्य प्रश्न वास्तव में दृष्टिकोण का है। एक गरीब बच्चे की भाषा को एक मानकीकृत भाषा के मापदंड से निरन्तर नापना कहां तक जायज़ है?

एक ही मापदड क्यों?

व्याकरण के प्रश्न को लीजिए। हिन्दी का अपना व्याकरण है। लेकिन ब्रज, अवधी व मैथिली का भी अपना व्याकरण है, जो हिन्दी से कदाचित अलग है। हिन्दी-व्याकरण को मापदंड मानकर ब्रज के व्याकरण को क्यों देखा जाए? सदियों से लोग संस्कृत, ग्रीक, लेटिन आदि को आधार मानकर संसार की सभी भाषाओं में शब्दों के आठ कारकगत रूप तलाश करते रहे हैं। हिन्दी के हर व्याकरण में आपको संस्कृत की ही तरह आठ कारक रूप दिखाने का प्रयत्न रहेगा। लेकिन वास्तव में हिन्दी में तीन ही कारकों के अनुसार शब्द परिवर्तन होता है यथा:

'लड़का' आदि

	एकवचन	बहुवचन
कर्ता	लड़का	लड़के
कर्म/अन्य	लड़के	लड़कों
संबोधन	हे लड़के!	हे लड़को!

'किताब' आदि

कर्ता	किताब	किताबें
कर्म/अन्य	किताब	किताबों
संबोधन	हे किताब!	हे किताबो!

हिन्दी की कारक व वचन संरचना समझने के लिए इससे अधिक आवश्यकता नहीं है। इसी प्रकार हिन्दी व्याकरण से अन्य भाषाओं को नापना उचित नहीं है। हिन्दी का -

नन्द का नन्दन कदम्ब के पेड़ के नीचे
धीरे-धीरे मुरली बजाता है।

ब्रज भाषा में -

नन्द को नन्दन कदम के तरु तर धीरे
धीरे मुरली बजावै।

हो जाएगा। और मैथिल — कोकिल विद्यापति ने इसे यूं कहा;

नन्दक नन्दन कदमक तरुतर धीरे धीरे
*मुरली बजाव। ***

मैथिली का नियम है कि 'नन्द' व 'नन्दन' में जो संबंध है वह 'क' के प्रयोग से दिखाया जाएगा; ब्रज में वही 'को' के व हिन्दी में वह 'का' के प्रयोग से। तो:

हिन्दी : *नन्द का नन्दन*
ब्रज : *नन्द को नन्दन*
मैथिली : *नन्दक नन्दन*

यह कहना कि ब्रज या मैथिली

भाषा को सदैव 'नन्द का नन्दन' ही कहना चाहिए उचित न होगा। ऊपर के उदाहरणों से यह भी स्पष्ट हो गया होगा कि कब हिन्दी-ब्रज-मैथिली एक दूसरे से घुल मिल जाएंगी और कब अपना-अपना स्वतंत्र रूप दिखाएंगी, यह कहना भी कोई आसान काम नहीं।

आप मैथिली, सिंधी, कोंकणी, नेपाली या मणिपुरी को कब 'भाषा' का दर्जा देना चाहते हैं, यह एक राजनैतिक प्रश्न है, भाषाई नहीं।

सत्ता से जुड़ा सवाल

व्याकरण को लेकर शुद्ध-अशुद्ध का प्रश्न भी बार-बार सामने आता है। विशेषकर अध्यापक स्वयं को शुद्ध व मानकीकृत भाषा का रखवाला मान लेते हैं। मैंने पहले भी कहा कि प्रश्न समझने व दृष्टिकोण का है। पहली बात – बच्चा जिस भाषा को लेकर स्कूल आता है वह पूर्णरूप से व्याकरण युक्त है। दूसरी बात – उसकी भाषा उसकी शिक्षा का माध्यम नहीं बन पाई यह एक राजनैतिक, सत्तागत प्रश्न है। तीसरी बात – मानकीकृत भाषा के सीखने के प्रयास में जो अशुद्धियां बच्चा करता है वे निराधार या बेतरतीब नहीं होतीं, उनकी अपनी संरचना होती है। चौथी बात – किसी अध्यापक के शुद्ध करने से बच्चे अपनी गलती एकदम सुधार नहीं लेते। गल्तियां समय आने पर ही सुधरती हैं। पांचवी बात – कोई भी बच्चा, कोई भी भाषा (पहली, दूसरी या दसवीं) बिना 'गलतियां' किए नहीं सीखता।

साहित्य के प्रश्न को ही लीजिए। अक्सर कहा जाता है कि जिसमें शिष्ट-साहित्य लिखा जाए वह भाषा, शेष उस भाषा की बोलियां। आम आदमी आज यही समझता है कि खड़ी बोली हिन्दी ही मानकीकृत भाषा है, साहित्य उसी में लिखा जाता है; अखबारों, दफ्तरों आदि में यही प्रयोग होती है। ब्रज, अवधी, मैथिली आदि हिन्दी की बोलियां हैं।

कैसी विडम्बना है – अवधी, जिसमें तुलसी कृत रामचरित मानस लिखा गया; ब्रज, जिसमें सूरदास ही नहीं अपितु अनेक हिन्दु व मुसलमान लेखकों ने महान साहित्य की रचना की व मैथिली, जिसमें विद्यापति ने लिखा – सब आज हिन्दी की माताएं न होकर उसकी बोलियां हो गईं। जब राजनीति व सत्ता का केन्द्र कन्नौज था, तो साहित्य की शिष्ट भाषा थी 'अपभ्रंश'। खड़ी बोली, ब्रज, अवधी आदि का जो भी रूप रहा हो, उसकी बोलियां कहलाईं। इसी तरह जब राजनैतिक केन्द्र ब्रज-क्षेत्र बना तो शिष्ट साहित्य की भाषा 'ब्रज' हो गई और

चर्चा के लिए, देखिए, किशोरीदास बाजपेयी, हिन्दी शब्दानुशासन 1958, पृष्ठ 582)

दिल्ली, मेरठ की खड़ी बोली उसकी बोली कहलाई। शासन व सत्ता का केन्द्र दिल्ली, मेरठ हुआ तो ब्रज, अवधी आदि हिन्दी की बोलियां कहलाने लगीं। वही बात कि सवाल दरअसल भाषा व राजनीति के संबंध को समझने का है। उसको समझकर एक ऐसा सजग दृष्टिकोण बनाने का है जो वैज्ञानिक व संरचनात्मक हो। इसलिए साहित्य के आधार पर भाषा व बोली में अन्तर संभव नहीं।

कोई भी लिपि, कोई भी भाषा

लिपि के प्रश्न को लीजिए। अक्सर लोग ऐसे बात करते हैं जैसे भाषा व लिपि का कोई जन्मजात संबंध हो। वास्तव में संसार की सभी भाषाएं एक ही लिपि में लिखी जा सकती हैं। और एक ही भाषा को लिखने के लिए आप संसार की सभी लिपियों का प्रयोग कर सकते हैं। उदाहरण के लिए हिन्दी व अंग्रेज़ी भाषा व देवनागरी व रोमन लिपि को लीजिए:

हिन्दी (देवनागरी):
मोहन खेल रहा है।
हिन्दी (रोमन):
mohan khel rahaa hai.
अंग्रेज़ी (रोमन):
Mohan is playing.
अंग्रेज़ी (देवनागरी):
मोहन इज़ प्लेइंग।

भारत की अनेक भाषाएं देवनागरी में लिखी जाती हैं व एक संस्कृत को लिखने के लिए भारत में ही अनेक लिपियों का प्रयोग होता है। ऐसा भी नहीं है कि लिपि होने से ही किसी भाषा में साहित्य की संभावना होती है। ऋगवेद जैसे साहित्य के लिए सदियों किसी लिपि की आवश्यकता नहीं पड़ी। सारे भारत में फिर भी ऋगवेद का वाचन एक ही तरह से होता है। गांव-गांव में *रामचरित मानस* नित गाया, सुना जाता है – लिपि की कोई आवश्यकता नहीं। भाषा प्राचीन है; लिपि अभी कल का आविष्कार। लिपि होने न होने से भाषा-बोली में अन्तर करना संभव नहीं। आप कुछ दोस्त मिलकर अपनी भाषा के लिए बड़ी आसानी से अपनी एक अलग लिपि बना सकते हैं। उसे कितना राजनैतिक समर्थन मिलेगा वह एक अलग बात है। संथाली आज कई लिपियों में लिखी जाती है – देवनागरी, रोमन, बंगला, उड़िया व ओल चिक्की। इनमें से कौन-सी लिपि मानकीकृत हो जाएगी यह एक राजनैतिक प्रश्न है। अभी द्वन्द्व जारी है।

विस्तृत क्षेत्र व व्यापक प्रयोग की खूब ठहरी। बार बार कहो कि हिन्दी का क्षेत्र विस्तृत है, प्रयोग व्यापक। जगह-जगह पोस्टर लगाओ। अखबारों में नित इश्तहार दो, रेडियो व टी.वी. पर प्रयोग करो और न जाने क्या-

क्या। बातों-बातों में हिन्दी को 'संवैधानिक राजभाषा' से 'राष्ट्रभाषा' का दर्जा दे दो। शिक्षा का माध्यम हिन्दी कर दो। और फिर कहो — लो भाई हिन्दी हुई भाषा व ब्रज, अवधी, मैथिली, बुन्देली, भोजपुरी आदि उसकी बोलियां। इन 'बोलियों' को बोलने वालों की अपार संख्या को हिन्दी में जमा कर दो और फिर कहो कि देखो, करोड़ों लोग हिन्दी बोलते हैं, कन्याकुमारी से लेकर हिमालय तक। थोड़ा धीरज रखकर ध्यान से सोचिए — हिन्दी आखिर कहां बोली जाती है? मानकीकृत हिन्दी का प्रयोग कहां-कहां होता है?

क्या आप या आपके दोस्त घर पर या आपस में हिन्दी बोलते हैं या आप भोजपुरी, अवधी, मैथिली, मघई, बुन्देली, ब्रज आदि-आदि बोलते हैं। मानकीकृत हिन्दी शायद मेरठ, इलाहाबाद व बनारस के कुछ हिस्सों में बोली जाती है। क्या चम्बा व हमीरपुर (हिमाचल), रोहतक व भिवानी (हरियाणा), जैसलमेर व सवाई माधोपुर (राजस्थान), छपरा व बलिया (बिहार), छिंदवाड़ा व रायपुर (मध्यप्रदेश) में मानकीकृत हिन्दी बोली जाती है।

मेरी हिन्दी में निम्न प्रयोग देखकर मेरे कुछ साथी अक्सर हंसते हैं, लेकिन जब उनके अपने बच्चे वही प्रयोग करते हैं तो लाचार से हो जाते हैं:

मैंने बाज़ार जाना है।
मेरे को काम है।
मुझे एक कौली दे दो।
ज़रा सब्जी को छेड़ा दे देना।

जो पंजाबी कहकर मेरा मज़ाक उड़ाते हैं वे यह भूल जाते हैं कि राजनीति व सत्ता का केन्द्र अब दिल्ली है। हिन्दी भी यहीं की चलेगी। या फिर लाखों पंजाबी जो अपनी मातृभाषा हिन्दी बताते हैं या लाखों ऐसे लोग जिनकी मातृभाषा हिन्दी गिन ली जाती है — हिन्दी बोलने वालों की संख्या में से कम कर देने चाहिए।

साफ है कि लिपि, व्याकरण, साहित्य, विस्तृत क्षेत्र व व्यापक प्रयोग आदि के आधार पर भाषा व बोली में अन्तर करना संभव नहीं। फिर भी यह अन्तर क्यों किया जाता है? और इतनी गहराई से किया जाता है कि हम 'हिन्दी' को भाषा व 'ब्रज' या 'बुन्देली' को बोली कहने में कुछ भी झिझक महसूस नहीं करते। हिन्दी को एक मानकीकृत भाषा का दर्जा देने के लिए व ब्रज, अवधी आदि को उसकी बोलियां बनाने के लिए आपके चारों ओर निरन्तर प्रयास हो रहे हैं; उन्हें ज़रा गौर से समझने का प्रयास करें।

रमाकान्त अग्निहोत्री — दिल्ली विश्वविद्यालय के भाषा विज्ञान विभाग में प्राध्यापक।